१२

योग और क्षेम

एक बार किसी चरवाहे को जंगल में घूमते समय एक चमकदार रत्न मिला। चरवाहा बड़ा खुश हुआ। उसने रत्न को चमकदार पत्थर समझा और उससे खेलने लगा। उछालते-लपकते, ऐसा हुआ कि वह रत्न हाथ से छूटकर पास के अन्धकूप में जा गिरा।

यह एक रूपक है। इसके द्वारा भारतीय संस्कृति का एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण विषय स्पष्ट होता है। इस रूपक पर यदि योग और क्षेम की दृष्टि से विचार करें, तो जान पाएँगे कि रत्न का मिलना एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण योग था। लेकिन उस योग के साथ क्षेम नहीं रहा, फलतः रत्न को गवाँ कर चरवाहा पहले की तरह खाली हाथ ही रह गया।

सर्वप्रथम हमें यह जान लेना चाहिए कि योग और क्षेम का क्या अर्थ है, उसका क्या भाव है? संस्कृत और प्राकृत वाङमय में इन शब्दों की बहुत चर्चा हुई है। उपनिषद्, गीता, जैनशास्त्र तथा बौद्धपिटक आदि प्राचीन साहित्य में स्थान-स्थान पर 'योग-क्षेम' शब्द आया है। उस युग के ये जाने-माने शब्द थे। बीच की शताब्दियों में जब सांस्कृतिक धारा का प्रवाह मन्द पड़ा, तो इन शब्दों का स्पर्श जनता की आत्मा को उतना नहीं हो सका, जितना कि प्राचीन युगों में था। अतः सम्भव है कि बहुत से सज्जन इन शब्दों की मूल भावना तक नहीं पहुँच पाए हों, इसलिए इन दोनों शब्दों का विस्तार पूर्वक चिन्तन अपेक्षित है।

योग का अर्थ :

योग शब्द के पीछे अनेक विचार-परम्पराएँ जुड़ी हुई हैं। योग का एक अर्थ—**'योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः'** भी है। आसन, प्राणायाम आदि क्रियाओं के द्वारा चित्त के विकल्पों का निरोध करना योग है। यह अर्थ योग-साधना में काफी प्रसिद्ध है। किन्तु, इसका एक दूसरा सर्व गाह्य अर्थ है—**'अप्राप्तस्य प्राप्तिर्योगः।'**

अप्राप्त वस्तु की प्राप्ति का नाम है योग, जिसे कि हम संयोग भी कहते हैं। जिसे पाने के लिए अनेकानेक प्रयत्न किए हों, अनेक आकांक्षाएँ मन में उभरी हों, उस वस्तु का मिल जाना योग है। अथवा कभी आकस्मिक रूप से बिना प्रयत्न के अनचाहे ही किसी चीज का मिल जाना भी योग है। यह योग प्रायः हर प्राणी को मिलता है। जो जीव जहाँ पर है, उसी गति-स्थिति के अनुसार, उसे अनुकूल या प्रतिकूल योग-संयोग मिलते रहते हैं। इसलिए मेरी दृष्टि में खाली संयोग का इतना महत्त्व नहीं है, जितना कि सुयोग का है। कथा के चरवाहे को हमेशा ही कंकर-पत्थर का संयोग मिलता था, किन्तु बहुमूल्य हीरे का सुयोग तो जीवन में एक बार ही मिला! कुछ व्यक्ति जो संयोग को ही महत्त्व देते हैं, उसे ही सब-कुछ मान बैठते हैं, जीवन में कोई ख्याति या धन कमाने का कोई चान्स—संयोग मिल गया, तो बस उसे ही जीवन का श्रेष्ठतम सुयोग मान लेते हैं। साधारण मनुष्य की दृष्टि बाह्य वस्तुओं पर ही अधिक घूमती है, अतः बाह्य रूप को ही वह अधिक महत्त्व देता है। और तो क्या, तीर्थंकरों के वर्णन में भी स्वर्ण सिंहासन, रत्न-मणिजटित छत्र और चामर आदि की चकाचौंध वाली बाह्य विभूतियों को ही प्रदर्शित करने की चेष्टा की जाती है। संसार के सभी मानदण्डों का आधार आज बाह्य वस्तु, बाह्य शक्ति ही बन रही है। परन्तु, यह योग सुयोग कहाँ है?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुयोग, तो वह होता है, जो जीवन-निर्माण की आधारशिला बनता है। हम उसी सुयोग की चर्चा करेंगे।

इस प्रकार, किसी अप्राप्त श्रेष्ठ-अच्छी वस्तु का प्राप्तिरूप योग महत्त्व-पूर्ण है, किन्तु यदि योग के साथ क्षेम नहीं हुआ, तो कोरे योग से क्या लाभ ? योग की महत्ता क्षेम की महत्ता पर आधारित है।

क्षेम का अर्थ :

क्षेम का अर्थ है—'**प्राप्तस्य संरक्षणं क्षेमः।**' प्राप्त हुई वस्तु की रक्षा करना, उसका यथोचित उपयोग करना, क्षेम है। योग के साथ क्षेम उसी प्रकार आवश्यक है जिस प्रकार कि जन्म के बाद बच्चे का पालन-पोषण। संयोग से सुयोग श्रेष्ठ है, किन्तु सुयोग से भी बड़ा है—क्षेम, अर्थात् उचित संरक्षण, उचित उपयोग। धन कामना कोई बड़ी बात नहीं है, किन्तु उसकी रक्षा करना, उसका सदुपयोग करना बहुत ही कठिन कार्य है। इसीलिए वह अधिक महत्त्वपूर्ण भी है। चरवाहे को रत्न का योग या सुयोग तो मिला, किन्तु वह उसका क्षेम नहीं कर सका। और, इसका यह परिणाम हुआ कि वह दरिद्र-का-दरिद्र ही रहा।

आपको मनुष्य जीवन का योग तो मिल गया। यह ऐसी दुर्लभ वस्तु मिली, जिसका सभी ने एक स्वर से महत्त्व स्वीकार किया है। देवता भी जिसकी इच्छा करते हैं, वह वस्तु आपको मिली। भगवान् महावीर ने तो इसको बहुत महत्त्वपूर्ण शब्द से सम्बोधित किया है। उनके चरणों में राजा या रंक जब भी कोई व्यक्ति उपस्थित हुआ, तो उन्होंने उसे 'देवानुप्रिय' जैसे श्रेष्ठ सम्बोधन से पुकारा। देवानुप्रिय का अर्थ है—यह मानव जीवन देवताओं को भी प्यारा है। ऐसे देव दुर्लभ जीवन का योग मिलने पर भी यदि उसका क्षेम—सदुपयोग नहीं किया जा सका, तो क्या लाभ हुआ ? मनुष्य की महत्ता सिर्फ मनुष्य जन्म प्राप्त होने से ही नहीं होती; उसकी महत्ता है इसके उपयोग पर। जो प्राप्त मानव जीवन का जितना अधिक सदुपयोग करता है, उसका जीवन उतना ही महत्त्वपूर्ण होता है। वैसे मानव-जीवन तो अनेक बार पहले भी मिल चुका है, किन्तु उसका सदुपयोग नहीं किया गया। चरवाहे की तरह, बस उसे खेल की ही वस्तु समझ बैठे और आखिर खेल-खेल में ही उसे गवाँ भी दिया। इसलिए योग से क्षेम महान् है। सुयोग से उपयोग प्रधान है।

भारत की वैष्णव-परम्परा के सन्त अपने भक्त से कहता है कि तू भगवान् से धन की कामना मत कर, यहाँ तक कि अपनी आयु की कामना भी मत कर, एकमात्र जीवन के सदुपयोग की कामना कर। और जैन शास्त्रों में तो यहाँ तक कहा गया है कि जीवन की कामना भी नहीं करनी चाहिए—"**जीवियं नाभिकंखेज्जा।**" खाली जीवन के लिए जीवन का क्या चाहना ? यह जीवन तो, पशु-पक्षी, कीट-पतंगों को भी प्राप्त है।

जीवन केवल जीने के लिए ही नहीं है, जीवन सदुपयोग के लिए है, अतः जीवन के सदुपयोग की कामना करो। इस प्राप्त शरीर से तुम संसार का कितना भला कर सकते हो, यह देखो ! भारतवर्ष के आचार्यों का दर्शन बताता है कि तुम कभी अपने सुख की माँग मत करो, धन-वैभव की याचना मत करो, किन्तु विश्व की भलाई की कामना अवश्य करो। यदि संयोग से धन प्राप्त हो जाता है, तो उसके सदुपयोग की बुद्धि आए, यही कामना करो।

संस्कृत-साहित्य में भगवान् से प्रार्थना के रूप में भक्त के द्वारा कही गई एक पुरानी सूक्ति है—

> **"नत्वहं कामये राज्यं, न स्वर्गं नापुनर्भवम्।**
> **कामये दुःख तप्तानां, प्राणिनामार्तिनाशनम्॥"**

भक्त कहता है—हे प्रभो ! न मुझे राज्य चाहिए, न स्वर्ग और न अमरत्व ही चाहिए। किन्तु दुःखी प्राणियों की पीड़ा मिटा सकूँ; ऐसी शक्ति चाहिए। एक ओर आप पेट भर

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

खाने के बाद भी आधी जूठन छोड़ कर उठते हैं, और दूसरी ओर एक इन्सान जूठी पत्तलें चाट कर भी पेट नहीं भर पाता है—यह विषमता जब तक मिट नहीं जाती, तब तक योग और क्षेम की साधना कहाँ हो सकती है ? भूखा आदमी हर कोई पाप कर सकता है, पंचतंत्रकार ने कहा है—

"बुभुक्षितः किं न करोति पापम् ?"

भूखा आदमी कौन-सा पाप नहीं कर सकता है ? भूखा आदमी विद्रोही होता है। अपने विद्रोह की ज्वाला में वह समाज को जलाकर भस्म कर डालना चाहता है। अतः जिनके पास धन है, रोटी है, वे अपने योग का सही उपयोग करना सीखें, योग से क्षेम की ओर बढ़ने की चेष्टा करें।

मान लीजिए, किसी के पास लाख रुपये हैं और वह अपनी आकांक्षाओं की पूर्ति के लिए उसका उपयोग करता है, अपनी वासना और अहंकार की आग में उसको झोंक देता है। इस प्रकार धन तो खर्च होगा, उसका उपयोग भी होगा, लेकिन वह उपयोग सदुपयोग नहीं है। उक्त स्थिति में बाह्य दृष्टि से धन के प्रति लोभ की कुछ मंदता तो जरूर हुई, किन्तु उसी के साथ-साथ अहंकार एवं दुर्वासनाओं ने उसे आक्रांत भी कर दिया है। यह तो वैसी ही बात हुई कि घर से बिल्ली को तो निकाला, परन्तु ऊँट घुस आया। इसके विपरीत लोभ-कषाय की मंदता से जो उदारता आई, उसके फलस्वरूप किसी असहाय की सहायता करने की स्वस्थ भावना जगे, तो वह श्रेष्ठ है। साथ ही जिस पीड़ित व्यक्ति को धन दिया जाता है, उसकी आत्मा को भी शान्ति मिलती है। उसके मन में जो विद्रोह की भावना सुलग रही है, दुर्विकल्पों का जो दावानल जल रहा है, उसका भी शमन होता है। हर हालत में भूख का समाधान आवश्यक है।

एक सन्त से किसी ने पूछा कि आप भोजन क्यों करते हैं ? क्या आप भी भूख के दास हैं ? उत्तर में गुरु ने कहा—भूख कुतिया है, जब वह लगती है, तो भूकना शुरू कर देती है, परिणामस्वरूप इधर-उधर के अनेक दुर्विकल्प जमा हो जाते हैं और भजन-ध्यान आदि में बाधा आने लगती है। इसीलिए उसके आगे रोटी के कुछ टुकड़े डाल देने चाहिएँ, ताकि भजन-स्वाध्याय में कोई विघ्न उपस्थित न हो। भूख का शमन करना साधना-पथ के यात्री सन्त-जनों के लिए भी आवश्यक हो जाता है।

धन की तीन अवस्थाएँ :

हाँ, तो दुर्विकल्पों की सृष्टि भूख से होती है। जो दाता अपने धन से दूसरों की क्षुधा-तृप्ति करता है, वह अपनी लोभ-कषाय की मन्दता के साथ दूसरों की आत्मा को भी शान्ति पहुँचाता है। जो धन अपने और दूसरों के सदुपयोग में नहीं आता, उसका उपयोग फिर तीसरी स्थिति में होता है। धन की तीन गतियाँ मानी गई हैं—

"दानं भोगो नाशस्तिस्रो गतयो भवन्ति वित्तस्य।
यो न ददाति, न भुंक्ते, तस्य तृतीया गतिर्भवति ।।"

पहली गति है दान। जिसके पास जो है, वह समय पर उसका दान करे, जन-कल्याण में लगाएँ। यह आदर्श है। दूसरी गति है—भोग ! जिसके पास धन है वह स्वयं नीतिपूर्वक उसका उपभोग करके आनन्द उठाए। किन्तु जिसके पास ये दोनों ही नहीं हैं, न तो अपने धन का दान करता है, और न ही उपभोग। उसके लिए फिर तीसरा मार्ग खुला है—विनाश का। जो अपने श्रम और अर्थ का दीन-दुःखी की सेवा के लिए प्रयोग नहीं करके संसार की

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बुराई में ही उपयोग करते हैं, उस धन और श्रम से उनको कोई लाभ नहीं होता, अपितु अकल्याण ही होता है, हानि ही होती है। एक सुभाषितकार कवि ने कहा है—

"विद्या विवादाय धनं मदाय,
शक्तिः परेषां परिपीड़नाय।
खलस्य साधोविपरीतमेतद्,
ज्ञानाय दानाय च रक्षणाय॥"

विद्या अज्ञान के अन्धकार को ध्वस्त करने के लिए है, ज्ञान के प्रकाश के लिए है। उस विद्या का उपयोग यदि पन्थों और मजहबों की लड़ाई में किया जाए, तो उस विद्या से जीवन पवित्र नहीं होता, बल्कि और अधिक कलुषित बन जाता है।

अजमेर सम्मेलन के अवसर पर एक परम्परा के किसी वृद्ध मुनि से किसी दूसरी परम्परा के मुनि ने सिद्धान्त कौमुदी के मंगल श्लोक का अर्थ पूछा। वृद्ध मुनि को उस श्लोक का अर्थ कुछ विस्मृत हो गया था। इस पर वह मुनि लोगों में इस बात के प्रचार पर उतारू हो गया कि—ये कैसे पण्डित हैं! एक श्लोक का अर्थ पूछा, वह भी नहीं बता सके? दूसरी बार जब किसी विषय पर तत्त्व-चर्चा चल रही थी, तो मैंने उन्हें जरा गहराई में धकेल दिया। प्रतिप्रश्न पूछा तो डगमगा उठे। आखिर उन्होंने स्वीकार किया कि मुझे स्मरण नहीं है। परन्तु अपनी इस विस्मृति का उन्होंने कहीं भी कोई जिक्र नहीं किया। विद्या के दंभ में आकर व्यक्ति दूसरों की गलती पर तो उनका मजाक उड़ाता है, किन्तु अपनी गलती की कभी कहीं चर्चा नहीं करता।

इसी प्रकार धन और शक्ति का उपयोग भी है। तुम्हारे पास धन है, तो इसका यह मतलब नहीं कि उससे दूसरों के लिए आफत खड़ी करो या दुर्व्यसनों में ही नष्ट कर डालो। धन, सम्पत्ति और ऐश्वर्य सेवा, परोपकार एवं दान के लिए होता है, न कि अहंकार के लिए। तुम्हारे पास यदि शक्ति है, तो किसी गिरते हुए को बचाओ, न कि उसको एक धक्का लगा कर और जोर से गिराने की चेष्टा करो।

शक्ति और विवेक :

यह मान्यता सही नहीं है कि जो शक्ति मिली है, उसका कुछ-न-कुछ उपयोग होना चाहिए, चाहे किसी भी रूप में क्यों न हो, यह गलत धारणा है। उपयोग के साथ विवेक का होना आवश्यक है। शक्ति तो दुर्योधन और दुःशासन में भी थी, कंस और रावण में भी थी, किन्तु उनकी शक्ति से विश्व को हानि ही पहुँची है। इसीलिए उनकी शक्ति आसुरी शक्ति कहलाई।

एक सेठ ने चन्दन की लकड़ियाँ खरीद कर अपने गोदाम भर रखे थे। सोचा था—चन्दन के भाव तेज होने पर इससे काफी बड़ा मुनाफा कमाऊँगा। इसी बीच सेठ किसी कार्यवश कहीं बाहर चला गया। पीछे वर्षा आने से घर में ईंधन की कमी हुई, तो सेठानी ने इधर उधर तलाश किया। गोदाम को जब खोला, तो सेठानी लकड़ियों का ढेर देखकर बड़ी खुश हुई। सोचा, वास्तव में सेठ बड़ा ही बुद्धिमान है, जो समय पर काम आने के लिए घर में हर वस्तु का पहले से ही संग्रह कर रखते हैं। सेठानी ने धीरे-धीरे चन्दन की सब लकड़ियाँ जला डालीं। पीछे से जब सेठ आया, तो एकदिन मन में विचार किया कि चन्दन का भाव बहुत तेज हो गया है। अतः अब बेचने से बहुत अच्छा लाभ मिल जाएगा। खुशी-खुशी उसने जब गोदाम खोला, तो एकदम सन्न रह गया कि यह क्या? यहाँ तो सब चौपट हो गया! उसने सेठानी से पूछा—"चन्दन कहाँ गया?"

सेठानी ने बताया—"चन्दन-वन्दन तो मैं जानती नहीं। हाँ! लकड़ियाँ थीं, सो मैंने जलाने के काम में ले लीं।"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सेठ ने गरज कर कहा—"अरे, वह तो चन्दन था। तूने गजब कर दिया। तुझे कब अक्ल आएगी?"

सेठानी ने तुनक कर कहा—"मुझे क्या पता, कैसी लकड़ी हैं? लकड़ी थीं, जलाने के काम में ले लीं। जरूरत पड़ी तो क्या करे कोई? मैंने तो उनसे रोटी ही पकाई है। कोई बुरा काम तो किया नहीं।"

सेठानी को बेचारा सेठ क्या समझाए कि जिन लकड़ियों से हजारों-लाखों रुपए कमाए जा सकते थे और जो औषधि के रूप में हजारों-लाखों लोगों को लाभ पहुँचा सकती थीं, उन्हें यों ही जलाकर राख कर डालना, क्या कोई समझदारी है?

यही स्थिति हमारे तन, धन और यौवन की है। जिस तन से संसार के सर्वश्रेष्ठ पद 'मुक्ति' की प्राप्ति हो सकती है, जिस जीवन से जगत् का मंगल-कल्याण हो सकता है, उस तन को, उस जीवन को कीडों-मकोड़ों की तरह गँवा देना, कौड़ी के मूल्य पर बर्बाद कर देना, क्या उस सेठानी की तरह ही बेवकूफी नहीं है?

इसलिए हमें जो कुछ प्राप्त हुआ है उस पर व्यर्थ ही इतराना नहीं चाहिए, बल्कि उसके सदुपयोग पर भी चिन्तन करना चाहिए। जब तक इन दोनों का सामंजस्य नहीं होगा, योग और क्षेम का समवतरण जीवन में नहीं होगा, तब तक मानव का कल्याण नहीं हो सकता। इस धरा पर जिन्हें मानव जीवन का योग मिला है, उन्हें अपने इस जीवन में क्षेम का भी ध्यान रखना चाहिए, जिससे उनका और विश्व का कल्याण हो सके।

●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org